दूसरी नज़र

■ पी चिदंबरम

अमर्यादित प्रचार

जून 2015 में अमेरिका के राष्ट्रपति चुनाव में एक उम्मीदवार ने कहा था, 'जब मैक्सिको अपने लोगों को भेजता है तो वह अपने सबसे अच्छे नागरिकों को नहीं भेज रहा होता है। वह उन लोगों को भेज रहा है जो कई तरह की समस्याओं का कारण बने हुए हैं। वे नशीली दवाएं ला रहे हैं, अपराध कर रहे हैं, वे बलात्कारी हैं।' लोग काफी गुस्से में थे, फिर भी छह करोड़ उनतीस लाख चौरासी हजार आठ सौ पच्चीस लोगों ने उन्हें नवंबर 2016 में वोट दिया था। जनवरी 2017 में इस उम्मीदवार ने दुनिया के सबसे अमीर और ताकतवर देश के पैंतालीसवें राष्ट्रपति के रूप में शपथ ली थी। ये डोनाल्ड ट्रंप हैं।

मुझे संदेह है कि भारत में ऐसे कई उम्मीदवार होंगे, जो इस वक्त चल रहे लोकसभा चुनाव में डोनाल्ड ट्रंप की तरह ही कुछ करना और सफल होना चाहेंगे। इस साल मार्च और अप्रैल में ढेरों बयान सुनने को मिले और मई में ऐसा और ज्यादा होगा जब नफरत और उग्रता भरे बयान तब तक आते रहेंगे जब तक कि 17 मई को चुनाव प्रचार बंद नहीं हो जाएगा।

अपने को ऐसे भाषण और बयान सुनने के लिए तैयार कर लीजिए, जिनमें जहर उगला जाएगा और जो उग्रता लिए हुए होंगे। मैं एक उदाहरण से शुरू करता हूं, जिसे सबसे नरम माना जा सकता है। अनर्गल प्रलाप करते रहने के लिए मशहूर भाजपा सासंद साक्षी महाराज ने चुनाव प्रचार अभियान की शुरुआत इन शब्दों से की- '2024 में कोई चुनाव नहीं होगा। मैं संन्यासी हूं और भविष्य देख सकता हूं। देश में यह आखिरी चुनाव होगा।' लोकसभा चुनाव-2019 की यह 'शुभ' शुरुआत थी।

अपशब्द और उपहास

चुनाव प्रचार में पहला हथियार अपशब्द था। यहां इसके कुछ उदाहरण देखिए।

केंद्रीय मंत्री महेश शर्मा ने 18 मार्च को कहा था- 'पप्पू कहता है कि वह प्रधानमंत्री बनना चाहता है। इसलिए मायावती, अखिलेश यादव, पप्पू और पप्पू का पप्पी भी इस कतार में खड़े हो गए हैं।'

बलिया से भाजपा के विधायक सुरेंद्र सिंह ने 24 मार्च को कहा था, 'राहुल की मां (सोनिया गांधी) भी इटली में उसी पेशे में थीं और उनके पिता ने उन्हें अपना बना लिया था। उन्हें (राहुल गांधी) भी अपने परिवार की परंपरा को बढ़ाते हुए सपना को अपना बना लेना चाहिए।'

अगली बेतुकी बात देखिए। महेश शर्मा ने 20 मार्च को मायावती पर निशाना साधते हुए कहा था- 'मायावतीजी रोजाना फेशियल करवाती हैं और बाल रंगती हैं, ताकि जवान दिखती रहें।'

धमकियां

धमकी सामान्य तौर पर इस्तेमाल किया जाने वाला हथियार रहा है।

इटावा के भाजपा उम्मीदवार रामशंकर कठेरिया ने 23 मार्च को कहा था- 'प्रदेश और केंद्र में हम सत्ता में हैं। अब जो भी हमारी तरफ उठाएगा उसकी अंगुलियां काट देंगे।'

मेनका गांधी भी ऐसी धमकियां देने से दूर नहीं रहीं। 12 अप्रैल को मुसलिम समुदाय के लोगों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा था- 'मैं यह लोकसभा चुनाव तो किसी तरह जीत ही जाऊंगी, लेकिन अगर बिना मुसलमानों के समर्थन से जीती, तो यह मुझे अच्छा नहीं लगेगा। बाद में जब कोई मुसलमान कोई काम लेकर आता है, तो मुझे लगता है इसे छोड़ो, क्या फर्क पड़ता है इससे?... मैं मुसलमानों के या बिना उनके समर्थन के जीत तो रही ही हूं।'

एक भाजपा नेता रंजीत बहादुर श्रीवस्ताव ने 19 अप्रैल को यह कहने में कोई हिचक नहीं दिखाई- 'प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने मुसलमानों का मनोबल तोड़ने की कोशिशें की हैं। अगर आप मुसलमानों की नस्ल को खत्म करना चाहते हैं तो प्रधानमंत्री मोदी को वोट दीजिए।'

इसी तरह दूसरी तरह की भी धमकियां थीं। इनके उदाहरण देखिए-

महाराष्ट्र में मंत्री सुश्री पंकजा मुंडे ने 21 अप्रैल को कहा- 'विपक्ष का कहना है कि ये सर्जिकल स्ट्राइक क्या है और किसने की। तब आपको राहुल गांधी में एक बम बांध कर उन्हें दूसरे देश में भेज देना चाहिए। तब उन्हें समझ में आ जाएगा।'

उसी दिन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने सबसे गैर-जिम्मेदाराना बयान दिया। परमाणु हथियारों को लेकर पाकिस्तान के कथित दावों का जिक्र करते हुए उन्होंने यह कह दिया- 'तब हमें क्या करना चाहिए? हमने अपने हथियार क्या दीवाली के लिए रखे हुए हैं?' मोदी से पहले दुनिया के किसी भी नेता (उत्तर कोरिया के किम को छोड़ कर) ने 1945 के बाद परमाणु हथियारों को लेकर इतनी अगंभीर बात नहीं की।

नफरत भरे भाषण

कई नफरत भरे शब्द बोले जा रहे हैं। इसमें सबसे आगे प्रज्ञा ठाकुर रहीं, जिन्होंने 19 अप्रैल को एक भाषण में यह कहा था कि तेरा सर्वनाश होगा और लीजिए, दिल थाम कर सुनिए श्री हेमंत करकरे (जो एक आदर्श और बहादुर पुलिस अधिकारी थे) आतंकवादियों से लड़ते हुए मारे गए थे।

मुसलिम समुदाय को लेकर भाजपा ने नफरत भरे भाषणों को हथियार इस उम्मीद में बनाया है कि इससे दो समुदायों के बीच ध्रुवीकरण होगा और लोग बंटेंगे। इस इरादे से जो बयान दिए गए, उन पर गौर फरमाएं-

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ ने नौ अप्रैल को कहा था- 'अगर कांग्रेस, सपा और बसपा को अली में भरोसा है तो हमें भी बजरंगबली में भरोसा है।'

कर्नाटक के पूर्व उपमुख्यमंत्री केएस ईश्वरप्पा ने एक अप्रैल को कहा था- 'हम कर्नाटक में मुसलमानों को टिकट नहीं देंगे, क्योंकि आप लोगों का हम पर भरोसा नहीं है।'

भाजपा अध्यक्ष अमित शाह ने 11 अप्रैल को यह कह कर भाजपा का इरादा साफ कर दिया था कि 'बौद्ध, हिंदू और सिखों को छोड़ कर हम एक-एक घुसपैठिए को निकाल बाहर करेंगे।'

विपक्ष के पास भी बोलने वाले थे, लेकिन कहीं से भी ऐसी कोई बात सुनने में नहीं आई, जो अपशब्द या धमकी के करीब हो।

अभी प्रचार के लिए चार चरण बाकी हैं और उन्नीस दिन बचे हैं। कई उम्मीदवार और प्रचारक काफी कुछ शब्द बाण छोड़ेंगे। हर गैर-जिम्मेदार अभिव्यक्ति से भारत लोकतंत्र में नागरिक संवाद के पायदान पर एक कदम और नीचे आ जाएगा। असल में जो खतरा है वह भाषण का नहीं, बल्कि खुद लोकतंत्र का है।

किशोरावस्था और अपराध

बिभा त्रिपाठी

किशोरावस्था व्यक्ति के जीवन का वह नाजुक दौर होता है, जब बहुत आसानी से कदम डगमगा सकते हैं। जब व्यक्ति अधीर हो उठता है अपनी मनचाही वस्तु को पाने के लिए। जब अनुशासन और नियंत्रण से दूरी बनाना ही उसका लक्ष्य हो जाता है और इस तरह किसी दिन कोई आपराधिक घटना घट जाती है। कभी-कभी घटनाएं इतनी संगीन हो जाती हैं कि पूरा देश सिहर जाता है।

दिल्ली के निर्भया कांड ने पूरे देश को उद्वेलित किया था। उस परिणाम स्वरूप कानूनों में कई अहम बदलाव किए गए। दंड विधान को और कठोर बनाया गया। निर्भया के बाद शक्ति मिल्स, मुंबई में दो बलाकार की घटनाएं प्रकाश में आईं, जिनमें फिर एक किशोर आयु के युवक की संलिप्तता उजागर हुई। इसी तरह रेयान इंटरनेशनल स्कूल के एक छात्र की निर्मम हत्या में भी एक किशोर की पहचान की गई। लखनऊ में सातवीं कक्षा की एक छात्रा ने एक बच्चे को चाकू से वार कर जख्मी कर दिया। फिर दिल्ली में बारहवीं के एक छात्र ने अपनी प्रिंसिपल को गोलियों से भून दिया। ये सभी किशोर और किशोरियां किसी न किसी विद्यालय के विद्यार्थी थे। उन पर पड़ने वाले मनोवैज्ञानिक दबाव की परिणति गंभीर अपराधों में देखने को मिली।

अल्बर्ट के. कोहेन पहले अपराधशास्त्री हैं, जिन्होंने किशोर अपराध को अपने अध्ययन का विषय बनाया। सन 1955 में अपनी पुस्तक में उन्होंने किशोर अपराध का विस्तार से उल्लेख किया। उन्होंने मध्यवर्गीय और श्रमिक वर्ग के बालकों का तुलनात्मक अध्ययन करके यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि कैसे श्रमिक वर्ग के बालकों को उपलब्ध सुविधाएं देख कर निम्नवर्ग के बालकों में नैराश्य जन्म लेता है। इसकी वजह से उनमें प्रतिक्रिया पैदा होती और किशोर वय के निम्नवर्गीय बालकों में अपचारी अपसंस्कृति पैदा होने लगती है। वे भी मध्यवर्गीय बालकों वाले लक्ष्य प्राप्त करना चाहते हैं। पर साधनों के अभाव में वे गलत रास्ता चुन लेते हैं। कोहेन आगे कहते हैं कि मध्यवर्ग के मूल्यों और मान्यताओं को ही मानदंड मान कर किसी भी व्यवहार की विवेचना की जाती है। मसलन, महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए गहन अध्ययन करना पड़ता है, पर निम्न मध्यवर्ग के बालक ऐसे मूल्यों और मान्यताओं से शासित नहीं हो पाते और एक अपचारी अपसंस्कृति को जन्म देते हैं।

इस प्रकार कोहेन ने यह बताने का प्रयास किया कि अपचारिता के शिकार ज्यादातर निम्नवर्ग के बालक होते हैं। हालांकि उनका यह सिद्धांत आलोचनाओं से परे नहीं रह पाया। निर्भया और शक्ति मिल्स में संलिप्त किशोर तो कोहेन के सिद्धांतों के तहत विश्लेषित हो जाते हैं, पर स्कूल के विद्यार्थियों की घटनाएं एक अलग प्रश्न उठाती हैं।

किशोर अपचारिता के विश्लेषण के लिए जिन कानूनी प्रावधानों को व्याख्यायित किया जा सकता है, उनमें भारतीय दंड संहिता की धारा 82 और 83 तथा किशोर न्याय अधिनियम 1986, किशोर न्याय (देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम 2015 प्रमुख हैं। जहां तक भारतीय दंड संहिता की बात है, तो इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि यह एक सामान्य कानून है और भाग चार के अपवाद खंड की दो धाराओं के जरिए यह स्पष्ट करता है कि सात वर्ष से नीचे के बालकों को अबोध माना जाता है और उन्हें आपराधिक दायित्व से पूर्ण उन्मुक्ति दी गई है, जबकि सात वर्ष से ऊपर और बारह वर्ष से नीचे के बालकों को सीमित उन्मुक्ति प्रदान की जाती है। यह देखकर कि क्या उनकी समझ परिपक्व थी और वे परिणाम की प्रत्याशा में अपने कार्य करते हैं या उनकी समझ इतनी नहीं थी कि उनके कार्य और परिणाम के बीच एक तार्किक संबंध स्थापित किया जा सके।

चूंकि किशोर न्याय अधिनियम एक विशिष्ट कानून है, इसलिए विधि सिद्धांतों के तहत विशिष्ट कानून सामान्य कानून के ऊपर अपना प्रभाव रखेंगे, जिसका सम्मिलित निष्कर्ष यह होगा कि सात वर्ष से ऊपर के बालक अगर परिपक्व हैं, तो किशोर न्याय अधिनियम के प्रावधानों से शासित होंगे।

किशोर न्याय अधिनियम में उत्तरोत्तर हो रहे परिवर्तनों को इस प्रकार समझा जा सकता है। एक ऐसे अधिनियम की आवश्यकता पूर्व में विद्यमान कानून के पुनरवलोकन में एक ऐसे अधिनियम की आवश्यकता को महसूस किया गया, जो एकरूप हो और जो पूरे भारत में लागू किया जा सके तथा जिससे अनौपचारिक व्यवस्था द्वारा उपेक्षित एवं अपचारी किशोरों की देखभाल, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास किया जा सके। इसलिए किशोर न्याय अधिनियम 1986 में सोलह वर्ष से कम उम्र के बालकों और अठारह वर्ष से कम उम्र की बालिकाओं पर लागू हुआ। चूंकि इस अधिनियम में उपेक्षित और अपचारी किशोरों के लिए भिन्न व्यवस्था नहीं बनाई गई थी और लड़के और लड़कियों की उम्र में अंतर था, इसलिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बाल अधिकार अभिसमय 1989 के अनुसरण में किशोर न्याय (देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम 2000 पारित हुआ, जिसमें उपेक्षित एवं अपचारी शब्दों को हटा कर देखभाल की आवश्यकता वाले बालक और विधि के संघर्ष में बालक और बालिकाओं को रखा गया।

फिर किशोर न्याय देखभाल एवं संरक्षण अधिनियम 2015 पारित किया गया। चूंकि निर्भया कांड के बाद आपराधिक विधि संशोधन अधिनियम 2013 पारित हुआ और उसके बाद ऐसे किशोर, जो जघन्य अपराधों में संलिप्त होते हैं, उनके लिए विशिष्ट प्रावधान करने की आवश्यकता महसूस की गई। इसलिए वर्तमान अधिनियम की धारा 15 में यह प्रावधान किया गया कि अगर सोलह से अठारह वर्ष के बीच के बालक किसी जघन्य अपराध में लिप्त होंगे, तो किशोर न्याय बोर्ड ऐसे मामलों को हस्तांतरित कर सकेंगे और दंड प्रावधानों का भयकारी प्रभाव डालने के उद्देश्य से उसे जेल में भी डाला जा सकेगा। हालांकि इस पर एक जनहित याचिका भी दायर की गई। उस पर सुनवाई करने से सर्वोच्च न्यायालय ने इनकार कर दिया और कहा कि यह जनहित याचिका का विषय नहीं है।

प्रसंग

> आज अहं केंद्रित समाज सिर्फ और सिर्फ अपने लिए सोच रहा है। ऐसे में गलती एक किशोर या किशोरी की नहीं, बल्कि पूरे समाज की है। अगर समय रहते हमने मूल्यों की पुनर्स्थापना के बारे में नहीं सोचा, तो एक अनिश्चित अज्ञात भय निश्चित ही हमें अपनी गिरफ्त में ले लेगा।

निर्भया कांड के बाद जब किशोर अभियुक्त के मामले पर सलिल बाली बनाम भारत संघ (2013) के संदर्भ में उच्चतम न्यायालय द्वारा विचार किया गया तब न्यायाधीशों के समक्ष अनेक याचिकाएं इस आशय से प्रस्तुत की गईं कि बलात्कार और हत्या के मामलों में किशोर को विशेष अधिनियम के तहत नहीं, बल्कि सामान्य अधिनियम के तहत विचार किया जाना चाहिए। मगर तब उच्चतम न्यायालय ने किशोर की आयु सीमा घटाने के सारे प्रस्तावों को खारिज कर दिया और कहा कि समाज की मुख्यधारा को ही ऐसे किशोरों को सुधारने का प्रयास करना चाहिए, अन्यथा वे अभ्यस्त अपराधी बन सकते हैं।

हालांकि इस समय एक नए कानून के अस्तित्व में आने से वाद-विवाद बढ़ता जा रहा है, पर निष्कर्ष के तौर यह भलीभांति समझा जा सकता है कि जितने वयस्क लोग अपराध कर रहे हैं उनमें भी दंड के भयकारी प्रावधानों मात्र से कोई बहुत सकारात्मक तब्दीली नहीं आ पा रही है। ऐसे में समाज को सोचना पड़ेगा कि वह कहां और कैसे गलत हो रहा है। मध्यवर्ग, जो सबसे बड़ा जन समूह है, आज अपने मूल्यों से ही भटक गया है। पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति ने इसे दिग्भ्रमित कर दिया है। आज के अभिभावक अपने छह माह के बच्चे से भी ऐसी उम्मीदें लगा लेते हैं कि बस आज ही पूरी दुनिया में उसका नाम हो जाएगा। यही सोच बच्चों के स्वाभाविक विकास में बाधक बन रही है। उनमें दूसरों की भलाई, उनके सुख-दुख के बारे में सोचने का संस्कार ही नहीं पड़ पा रहा है।

पहले लोग दूसरों की खुशी में खुश होते थे, पर आज अहं केंद्रित समाज सिर्फ और सिर्फ अपने लिए सोच रहा है। ऐसे में गलती एक किशोर या किशोरी की नहीं, बल्कि पूरे समाज की है। अगर समय रहते हमने मूल्यों की पुनर्स्थापना के बारे में नहीं सोचा, तो एक अनिश्चित अज्ञात भय निश्चित ही हमें अपनी गिरफ्त में ले लेगा। ऐसे में सामाजिक संस्थाओं को अपनी जिम्मेदारी का भरपूर निर्वाह करना होगा और बच्चों के स्वस्थ समाजीकरण पर ध्यान देना होगा। पीड़ितों, अभियुक्तों और समाज के त्रिकोणीय संबंध को कैसे समायोजित किया जाएगा। कैसे पुनर्स्थापित किया जाएगा और कैसे पीड़ितों की क्षतिपूर्ति होगी। इस पर गहन मंथन की आवश्यकता होगी।

जाएं तो जाएं कहां

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

अटल बिहारी वाजपेयी ने कभी मुझसे कहा था, 'जाएं तो जाएं कहां'। बाबरी मस्जिद गिराए जाने के कुछ दिन बाद मैं उनसे मिलने गई थी और उन्होंने स्पष्ट शब्दों में अपना दर्द व्यक्त किया था। सो, मैंने उनसे पूछा कि भारतीय जनता पार्टी को छोड़ क्यों नहीं देते हैं? इस सवाल के जवाब में उन्होंने उस फिल्मी गीत के शब्दों में जवाब दिया था। उनके शब्द मुझे इन दिनों बहुत याद आते हैं, क्योंकि कुछ ऐसा ही हाल है इस चुनाव में भारत के मतदाताओं का। जहां जाती हूं, मुझे मिलते हैं लोग जो या तो 'हर हर मोदी, घर घर मोदी' कहते हैं या अगर थोड़े निराश हैं, तो कहते हैं कि मोदी को वोट नहीं देंगे तो देंगे किसको?

पिछले आम चुनाव में विकल्प स्पष्ट थे। एक तरफ थे वे लोग, जो सत्ता में दशकों रहने के बाद भारत पर राज करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानने लगे थे। दूसरी तरफ था एक चायवाले का बेटा, जो परिवर्तन और विकास के वादे करके लोकप्रिय हुआ था देश भर में।

इस बार नरेंद्र मोदी से अगर इतनी उम्मीदें नहीं जुड़ी हैं, जितनी पांच साल पहले थीं, तो इसलिए कि उनके खेमे में कुछ ऐसे लोग दिखने लगे हैं, जिनकी राजनीति का आधार सिर्फ नफरत है।

पिछले दिनों मेरा उनसे वास्ता जरूरत से ज्यादा रहा है सोशल मीडिया पर, क्योंकि मैंने साध्वी प्रज्ञा ठाकुर को लोकसभा में भेजने के प्रयास का विरोध किया है।

पिछले हफ्ते मेरा लेख छपते ही नफरत की आंधी आ पड़ी मेरे ट्विटर खाते में। मेरे निजी जीवन को लेकर झूठी बातें कही गईं, मेरे चरित्र को लेकर गंदी-गंदी बातें कही गईं और 'लटयन्स दिल्ली' में रहने का आरोप लगा। हां, मैं बचपन से दिल्ली के इस इलाके में रहती आई हूं। तबसे जब यह दरबारियों का अड्डा नहीं था। सिर्फ एक खूबसूरत रिहाइशी इलाका, जिसमें रिहाइश पाना सौभाग्य माना जाता था, गुनाह नहीं। यहां रहना मुझे नसीब हुआ, क्योंकि मेरे नाना उन पांच ठेकेदारों में से थे, जिन्होंने एडविन लटयन्स के साथ नई दिल्ली का निर्माण किया था। सो, विरासत में मुझे यहां एक छोटा फ्लैट मिला है।

जो आरोप मुझे इन नफरत से भरे हिंदुत्ववादियों का सबसे अजीब लगा, वह यह कि मैंने वफादारी नहीं दिखाई है उस विचारधारा से, जिसके प्रतीक मोदी हैं। इस बात से जाहिर होता है कि मोदी के समर्थक राजनीतिक पत्रकारिता नहीं समझ पाए हैं। मेरे जैसे लोगों की वफादारी विचारों और नीतियों से होती है, राजनेताओं और राजनीतिक दलों से नहीं। सो, जब मोदी ने अपने शासनकाल में ऐसे काम किए हैं, जो मुझे अच्छे लगे हैं, मैंने उनकी तारीफ की है और जब मुझे उनकी नीतियां पसंद नहीं आई हैं, मैंने आलोचना की है। यही धर्म है राजनीतिक पत्रकारों का।

> उस दौर में गरीबी हटाने के नाम पर अमीरों पर सत्तानबे प्रतिशत टैक्स लगा था। मुंबई में मेरे उद्योगपति दोस्त बताते हैं कि टैक्स भरने के लिए उनको उधार लेना पड़ता था। गरीबी हट गई होती तो कौन गिला करता, लेकिन न गरीबी हटी और न भारत में समृद्धि आई।

आज भी अगर मैं मोदी की समर्थक हूं, उनके नफरत भरे साथियों के बावजूद, तो इस लिए कि राहुल गांधी में मुझे आज तक एक भी गुण नहीं नजर आता है। उनके चुनाव अभियान में या तो मैंने झूठी बातें सुनी हैं मोदी के 'पंद्रह अमीर दोस्तों' को लेकर, रफाल सौदे को लेकर या फिर ऐसी आर्थिक नीतियों का समर्थन, जिनसे यादें ताजा होतीं हैं उनकी प्रिय दादी अम्मा के दौर की। उस दौर को समाजवादी आर्थिक नीतियों का सबसे सुनहरा दौर मानते हैं वामपंथी राजनीतिज्ञ। उस दौर में गरीबी हटाने के नाम पर अमीरों पर सत्तानबे प्रतिशत टैक्स लगा था। मुंबई में मेरे उद्योगपति दोस्त बताते हैं कि टैक्स भरने के लिए उनको उधार लेना पड़ता था। गरीबी हट गई होती तो कौन गिला करता, लेकिन न गरीबी हटी और न भारत में समृद्धि आई।

हम जैसे लोगों का हाल यह था कि गैस कनेक्शन या फोन लेने के लिए हमको सांसदों और आला अधिकारियों के पास जाकर मिन्नतें करनी पड़ती थीं। उनको इन चीजों का कभी अभाव न था जनता की बदौलत। सो, हमारे पैसों से उनको मिलते थे आलीशान आवास, मुफ्त बिजली, गैस, फोन और नौकर। उनकी रेल यात्राएं और विदेशी यात्राओं के भी पैसे हम देते थे, क्योंकि यही है समाजवादी दस्तूर। इंदिरा गांधी के पोते ने स्पष्ट किया है अपने हर भाषण में कि वे जिस दिन प्रधानमंत्री बनेंगे, तो वापस लाएंगे ऐसी नीतियां, जो पहले हुआ करती थीं। उनकी सरकार बनेगी तो गरीबी हटाने के नाम पर मुमकिन है कि भारत देश इतना गरीब हो जाएगा कि वेनेजुएला का जो आज हाल है, वह भारत का निकट भविष्य में हो जाएगा।

सो, ये हैं देश के सामने विकल्प। एक तरफ हैं वही लोग, जो सत्ता में रहने के इतने आदी हैं कि भारत पर राज करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं। दूसरी तरफ हैं मोदी, जिन्होंने काफी हद तक परिवर्तन अच्छे किस्म का लाकर दिखाया है, लेकिन साथ में यह भी दिखाया है कि उनके समर्थकों में कुछ ऐसे लोग, कुछ ऐसी संस्थाएं हैं, जिनका एक ही मकसद है और वह है नफरत फैलाना हिंदुओं और मुसलमानों के बीच। नफरत ने इन कइयों को इतना पागल कर दिया है कि वे मानते हैं कि एक दिन आएगा जब भारत के हर मुसलमान को पाकिस्तान भेज दिया जाएगा। कहते हैं जहरीली ट्वीट करके बार-बार कि जब पाकिस्तान मुसलमानों के लिए बना है, तो मुसलमानों को भारत में रहने का कोई अधिकार नहीं होना चाहिए। जानते हैं ये लोग भी कि मुसलमान कहीं नहीं जाने वाले हैं, लेकिन नफरत फैलाने में जैसे उनको शांति मिलती है।

समझ गए होंगे आप अभी तक कि अटलजी के वे शब्द मेरे कानों में क्यों इतनी बार गूंजते रहे हैं पिछले दिनों? मैं अकेली नहीं हूं, जिसके लिए ये शब्द खास मायने रखते हैं इन दिनों। लाखों भारतीय मतदाता आज पूछ रहे हैं अपने आप से 'जाएं तो जाएं कहां।'

बिना विचारे जो करे ...

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

साध्वी साध्वी हैं। एकदम प्रांजल हिंदी में जब उन्होंने कहा कि 'मैंने कहा, जा तेरा सर्वनाश हो और वह आतंकियों की गोली से मारा गया', तो सचमुच डर लगा कि कहीं यह श्राप हम दर्शकों को न लग जाय!

क्या तेज था! क्या ओज था! एक ओर एक 'अत्याचारित' साध्वी के देशप्रेम की अटूट कथा थी। दूसरी ओर आततायी थे, जिनने तोड़ना चाहा, लेकिन वाह रे तप, कि टूटने नहीं दिया।... यह चुनाव नहीं, धर्मयुद्ध है। साथ बैठे एक भाई इस करुणकथा को सुनते-सुनते अश्रु पोंछने लगते हैं।

अरे कलजुगी एंकरो! इतने पर भी मेरे उस श्राप का बुरा मानते हो? कहते हो कि यह करकरे का अपमान है। करकरे आतंकियों से लड़ता हुआ शहीद हुआ और कहा जा रहा है कि वह अत्याचारी था। लेकिन एक चर्चा को सुन ऐसा लगा कि करकरे को आतंकियों ने नहीं मारा, साध्वी के श्राप ने मारा।

देखी साध्वी के श्राप की ताकत! अरे एंकरो, अब भी डरो! मिरर नाउ की पफे डिसूजा जी, क्या आपको श्राप का डर नहीं? जब उनकी प्रवक्ता ने कह दिया कि साध्वी ने खेद प्रकट कर तो दिया, तब भी कहे जाती हो 'नॉट एनफ' यानी इतना काफी नहीं, इतना काफी नहीं!'

हे शिकायत करने वालो! श्राप के मामले में आयोग क्या करेगा? कहेगा कि ऐसा नहीं बोलो, लेकिन उससे क्या? तपस्वियों के श्राप का बल आयोग से भी उंचा होता है।

लेकिन श्राप-कथा सिर्फ भोपाल में नहीं कही गई, इससे पहले पहली श्राप-कथा यूपी में कही गई!

बड़े-बड़े तपस्वियों का तप हरने वाले और जनता से अगाध प्रेम करने वाले एक महाराज जी एक दिन प्यारी जनता को समझाते हुए कुछ इस तरह से बोल उठे कि '...संन्यासी हूं... वोट न दिया तो श्राप दे दूंगा!'

एंकरों को लगा कि उन्हीं को धमकाया जा रहा है। सो, चीखने लगे कि यह क्या हो रहा है और आयोग आयोग चिल्लाने लगे!

बताइए, श्राप जैसी आध्यात्मिक कार्रवाई में चुनाव आयोग का क्या काम?

कल को अगर स्वामी जी ने आयोग को ही श्राप दे दिया, तो क्या कर लोगे?

> सावधान! तपस्वियों के श्राप के माहात्म्य को समझो और डरो! जिन तपस्वियों ने भारत के कल्याण के लिए सब कुछ त्याग दिया, उनको क्रोध न दिलाओ। उनके पास देने को श्राप के अलावा कुछ नहीं, जबकि पाने के लिए संसद और सरकार पड़ी है।

सो, कलजुगी एंकरो-रिपोर्टरो! सावधान! तपस्वियों के श्राप के माहात्म्य को समझो और डरो! जिन तपस्वियों ने भारत के कल्याण के लिए सब कुछ त्याग दिया, उनको क्रोध न दिलाओ। उनके पास देने को श्राप के अलावा कुछ नहीं, जबकि पाने के लिए संसद और सरकार पड़ी है।

एक भिन्न किस्म की ब्लैकमेल की अगली कथा दिल्ली में बनी! एक सुबह एक चैनल ने लाइन दिखाई : 'चीफ जस्टिस ऑफ इंडिया पर सेक्सुअल हेरासमेंट' का आरोप लगा!

अपना तो दिल ही कराह उठा! देश भर के यौन उत्पीड़न के मामलों को सुनने वालों पर भी यौन उत्पीड़न का आरोप! सच, इस कलजुग में देवता तक सुरक्षित नहीं।

पहले लगा कि यह तो शुद्ध ब्लैकमेल है, लेकिन इस दुष्टात्मा को तसल्ली हुई कि चलो अब आया ऊंट पहाड़ के नीचे! अब तक सबकी सुनवाई कर फैसला देते थे, अब कराओ 'मी लॉर्ड' अपनी सुनवाई!

खल कहां बख्शने वाले, सो शिकायत करने लगे कि महामहिम अपने खिलाफ शिकायत सुनने स्वयं कमेटी में क्यों बैठे? यह कानून का उल्लंघन है! मामला अदालत में लंबित है।

पर अपने राहुल भइया का जवाब नहीं! अभी तक 'चौकीदार चोर' बोल बोल कर आनंद' ले रहे थे अब कह दिए कि 'मर्डर एक्यूज्ड' यानी कत्ल का अरोपी अमित शाह!

यह क्या उचार दिए प्रभु! अभी 'चौकीदार चोर' का मामला नहीं निपटा था कि दूसरा पंगा ले लिया! जरा भी न सोचा कि : 'जाको प्रभु दारुण दुख देही/ ताकी मति पहले हर लेही!'

अब झेलो केस। मांगते रहो माफियां। कहते रहो कि मेरा मतलब यह नहीं था, वो नहीं था कि मुझे खेद है! सच ही कहा है : 'बिना विचारे जो करे सो पाछे पछिताय/ काम बिगारे आपनो जग में होत हंसाय!'

और भइए! जब यों ही बिना फाइट दिए हटना था, तो चैनलों में 'प्रियंका वाराणसी से लड सकतीं हैं' का तूमार क्यों बंधने दिया! क्या यह भी भाजपा को तंग करने के लिए और मजा लेने के लिए नहीं था?

इधर 'आइडिया ऑफ इंडिया' खतरे में दिखता है, उधर इस खतरे से लड़ने के लिए 'प्रियंका वाराणसी से लड़ सकती हैं' जैसा अर्ध-संदेह अलंकार चिपकाने का आनंद लेते हैं! अब झेलिए भाजपा का कटाक्ष कि प्रियंका हार के डर से मैदान छोड़ कर भाग गईं!